



Ancient Vedic Mantras and Rituals





Shrimad Bhagavad Gita Chapter-4 Shalok-13 | श्रीमद् भगवद्गीता अध्याय चार-श्लोक तेरह | PDF

अध्याय 4 – ज्ञान कर्म संन्यास योग श्लोक 13

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ॥13॥
सरल हिंदी में भावार्थ

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

हे अर्जुन! मैंने मनुष्यों के गुणों और कर्मों के आधार पर चार वर्णों की व्यवस्था की है। यद्यपि मैं इस व्यवस्था का कर्ता हूँ, फिर भी तुम मुझे अकर्ता और अविनाशी जानो।

विस्तृत व्याख्या

गुण और कर्म के आधार पर चार वर्णों की व्यवस्था

इस श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण समाज में विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं और कर्तव्यों के सिद्धांत को समझाते हैं। भगवान कहते हैं कि उन्होंने चार वर्णों की व्यवस्था गुण और कर्म के विभाग के अनुसार स्थापित की है।



यहाँ गुण का अर्थ मनुष्य के स्वभाव, प्रवृत्तियों और आंतरिक विशेषताओं से है, जबकि कर्म का अर्थ उसके कार्यों और कर्तव्यों से है।

इस श्लोक का मुख्य संदेश यह है कि मनुष्य के जीवन में उसकी प्रवृत्ति, योग्यता और कर्म का विशेष महत्व है। प्रत्येक व्यक्ति की क्षमताएँ और रुचियाँ अलग-अलग हो सकती हैं, इसलिए समाज में भी अलग-अलग प्रकार के कार्य और जिम्मेदारियाँ होती हैं।

गुण का महत्व

प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव एक जैसा नहीं होता। किसी व्यक्ति में ज्ञान प्राप्त करने, शिक्षा देने और आत्मचिंतन करने की प्रवृत्ति अधिक होती है। किसी में साहस, नेतृत्व और संरक्षण की भावना अधिक होती है।

कुछ लोगों में व्यापार, उत्पादन और संसाधनों के प्रबंधन की विशेष क्षमता होती है, जबकि कुछ लोग सेवा, कौशल और व्यावहारिक कार्यों में विशेष दक्षता रखते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण बताते हैं कि मनुष्य की आंतरिक प्रवृत्तियाँ उसके जीवन और कर्मों की दिशा को प्रभावित करती हैं।

इसलिए व्यक्ति को अपने स्वभाव और क्षमताओं को समझकर उचित और धर्मपूर्ण कर्म करना चाहिए।



कर्म का महत्व

इस श्लोक में केवल गुणों की नहीं, बल्कि कर्मों की भी महत्वपूर्ण भूमिका बताई गई है।

मनुष्य अपने कर्मों से अपने जीवन की दिशा बनाता है। उसके कार्य, व्यवहार, जिम्मेदारियाँ और कर्तव्य उसके व्यक्तित्व को प्रकट करते हैं।

भगवान का संदेश है कि व्यक्ति को अपने कर्तव्यों को ईमानदारी, निष्ठा और जिम्मेदारी के साथ निभाना चाहिए।

किसी भी समाज के सुचारु संचालन के लिए ज्ञान, शिक्षा, सुरक्षा, प्रशासन, कृषि, व्यापार, सेवा और विभिन्न कौशलों से जुड़े कार्य आवश्यक होते हैं।

इसलिए प्रत्येक धर्मपूर्ण और उपयोगी कर्म का अपना महत्व है।

गुण और कर्म का संबंध

गुण और कर्म एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

मनुष्य का स्वभाव उसकी रुचियों और कार्यों को प्रभावित करता है, जबकि उसके कर्म उसके जीवन के अनुभवों और व्यक्तित्व को आकार देते हैं।

जिस व्यक्ति में ज्ञान और विवेक की प्रवृत्ति अधिक होती है, वह शिक्षा और ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ सकता है। जिस व्यक्ति में साहस और नेतृत्व की शक्ति अधिक होती है, वह सुरक्षा और प्रशासन से जुड़े कार्यों की ओर आकर्षित हो सकता है।



इसी प्रकार व्यापारिक समझ रखने वाला व्यक्ति आर्थिक गतिविधियों में रुचि ले सकता है और सेवा तथा कौशल की प्रवृत्ति रखने वाला व्यक्ति समाज के व्यावहारिक कार्यों में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

यह शिक्षा हमें बताती है कि व्यक्ति को अपनी योग्यताओं को पहचानकर उनका उपयोग समाज और धर्म के हित में करना चाहिए।

समाज में सहयोग और संतुलन

समाज में विभिन्न प्रकार के कार्य होते हैं और सभी कार्यों का अपना महत्व है।

ज्ञान देने वाला व्यक्ति, समाज की रक्षा करने वाला व्यक्ति, उत्पादन और व्यापार करने वाला व्यक्ति तथा सेवा और कौशल से जुड़े कार्य करने वाला व्यक्ति—सभी समाज के संतुलित संचालन में योगदान देते हैं।

जब प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य को जिम्मेदारी और ईमानदारी से निभाता है, तब समाज में सहयोग और संतुलन स्थापित होता है।

इसलिए किसी भी उपयोगी और धर्मपूर्ण कार्य को छोटा या बड़ा समझकर उसका अपमान नहीं करना चाहिए।

भगवान इस व्यवस्था के कर्ता हैं

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि इस व्यवस्था के कर्ता वे स्वयं हैं।



इसका अर्थ है कि संसार की व्यवस्था, प्रकृति और कर्म के नियम एक व्यापक दिव्य व्यवस्था के अंतर्गत कार्य करते हैं।

लेकिन इसके बाद भगवान एक अत्यंत गहरा आध्यात्मिक सत्य बताते हैं।

वे कहते हैं कि यद्यपि मैं इस व्यवस्था का कर्ता हूँ, फिर भी मुझे अकर्ता जानो।

यह बात भगवान और सामान्य जीव के कर्मों के बीच के अंतर को समझने में सहायता करती है।

भगवान अकर्ता क्यों हैं?

सामान्य जीव अपने कर्मों के अनुसार फल प्राप्त करता है। जब मनुष्य इच्छा, स्वार्थ और फल की अपेक्षा से कर्म करता है, तो वह कर्म के परिणामों से प्रभावित हो सकता है।

लेकिन भगवान किसी व्यक्तिगत इच्छा या आवश्यकता को पूरा करने के लिए कर्म नहीं करते। वे पूर्ण और स्वतंत्र हैं।

उनके कार्य दिव्य उद्देश्य से जुड़े होते हैं और वे कर्मफल के बंधन से परे रहते हैं।

इसलिए भगवान संसार की व्यवस्था के मूल कर्ता होते हुए भी सामान्य जीवों की तरह कर्मबंधन में नहीं बंधते।

अव्ययम् – भगवान का अविनाशी स्वरूप

अव्ययम् का अर्थ है—जो कभी नष्ट नहीं होता, जो शाश्वत है और परिवर्तन से परे है।



इस संसार में शरीर, वस्तुएँ और परिस्थितियाँ निरंतर बदलती रहती हैं। मनुष्य का शरीर भी जन्म से लेकर वृद्धावस्था तक अनेक परिवर्तन अनुभव करता है।

लेकिन भगवान का परम स्वरूप इन भौतिक परिवर्तनों से परे है।

वे शाश्वत, पूर्ण और अविनाशी हैं। उनकी शक्ति और चेतना किसी भौतिक सीमा से बंधी नहीं है।

इसलिए भगवान के दिव्य कार्यों को सामान्य मनुष्य के कर्मों के समान नहीं समझना चाहिए।

भगवान और जीव के कर्मों में अंतर

सामान्य जीव कर्म करता है और कर्मों के परिणामों से प्रभावित होता है। उसके कर्म उसकी इच्छाओं, गुणों और परिस्थितियों से जुड़े हो सकते हैं।

लेकिन भगवान पूर्ण स्वतंत्रता के साथ कार्य करते हैं और कर्मफल के बंधन में नहीं आते।

भगवान संसार की व्यवस्था को बनाए रखते हैं और जीवों के कल्याण के लिए कार्य करते हैं, लेकिन वे किसी कर्मफल की इच्छा से प्रेरित नहीं होते।

यह शिक्षा हमें निष्काम कर्म के सिद्धांत को समझने में सहायता करती है।



ज्ञान कर्म संन्यास योग में इस श्लोक का महत्व

यह श्लोक ज्ञान कर्म संन्यास योग के मुख्य सिद्धांतों से जुड़ा हुआ है।

मनुष्य को अपने स्वभाव, गुण और क्षमताओं को समझकर अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। लेकिन कर्म करते समय केवल व्यक्तिगत लाभ और अहंकार से प्रेरित नहीं होना चाहिए।

जब व्यक्ति अपने कर्मों को धर्म, सेवा और भगवान के प्रति समर्पण की भावना से करता है, तब उसका कर्म धीरे-धीरे शुद्ध होने लगता है।

ज्ञान व्यक्ति को अपने वास्तविक कर्तव्य को समझने में सहायता करता है और समर्पण कर्म के प्रति अत्यधिक आसक्ति को कम करने का मार्ग दिखाता है।

मुख्य बिंदु

- भगवान श्रीकृष्ण ने चार वर्णों की व्यवस्था गुण और कर्म के आधार पर बताई है।
- गुणकर्मविभागशः का अर्थ गुणों और कर्मों के अनुसार विभाग है।
- प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव, क्षमता और कार्य करने की प्रवृत्ति अलग-अलग होती है।
- व्यक्ति को अपनी योग्यता और स्वभाव के अनुसार धर्मपूर्ण कर्म करना चाहिए।



- समाज में विभिन्न प्रकार के कार्यों का अपना महत्व है।
- ज्ञान, शिक्षा, सुरक्षा, व्यापार, उत्पादन, सेवा और कौशल सभी समाज के लिए आवश्यक हैं।
- भगवान इस व्यवस्था के मूल कर्ता हैं।
- फिर भी भगवान कर्मफल के बंधन से परे हैं।
- भगवान अकर्ता और अविनाशी हैं।
- यह श्लोक गुण, कर्म, कर्तव्य और भगवान के दिव्य स्वरूप को समझने का मार्ग दिखाता है।

गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ

यह श्लोक केवल समाज की विभिन्न भूमिकाओं के बारे में नहीं बताता, बल्कि कर्म और चेतना के गहरे सिद्धांत को भी समझाता है।

गुणकर्मविभागशः हमें सिखाता है कि मनुष्य के स्वभाव और कर्म उसके जीवन की दिशा को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति को अपनी योग्यताओं को समझकर जिम्मेदारी और धर्म के साथ कर्म करना चाहिए।

श्लोक का दूसरा भाग और भी गहरा आध्यात्मिक सत्य बताता है।

भगवान कहते हैं कि वे इस व्यवस्था के कर्ता होते हुए भी अकर्ता और अविनाशी हैं। इसका अर्थ है कि भगवान कर्म करते हुए भी सामान्य जीवों की तरह कर्मफल के बंधन में नहीं आते।



इस श्लोक का गहरा संदेश यह है कि सच्ची आध्यात्मिक उन्नति कर्म छोड़ने से नहीं, बल्कि कर्म के पीछे मौजूद स्वार्थ, अहंकार और फल की आसक्ति को समझकर धीरे-धीरे उससे ऊपर उठने से होती है।

जब मनुष्य अपने कर्तव्य को ईमानदारी से करता है और उसे भगवान के प्रति समर्पण तथा उच्च उद्देश्य से जोड़ता है, तब वही कर्म आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम बन सकता है।

पदों का भावार्थ

चातुर्वर्ण्यम् – चार वर्णों की व्यवस्था

मया – मेरे द्वारा

सृष्टम् – रची गई, स्थापित की गई

गुण – स्वभाव, प्रवृत्तियाँ और आंतरिक विशेषताएँ

कर्म – कार्य और कर्तव्य

विभागशः – विभाग या विभाजन के अनुसार

तस्य – उस व्यवस्था का

कर्तारम् – कर्ता, बनाने वाला

अपि – यद्यपि, भी

माम् – मुझे

विद्धि – जानो, समझो



अकर्तारम् – अकर्ता, कर्मबंधन से परे

अव्ययम् – अविनाशी, शाश्वत

श्लोक का संदेश

भगवान श्रीकृष्ण बताते हैं कि समाज में विभिन्न प्रकार की भूमिकाएँ और जिम्मेदारियाँ मनुष्य के गुण और कर्म के अनुसार समझी जानी चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता, स्वभाव और योग्यता को पहचानकर ईमानदारी तथा धर्म के साथ अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

साथ ही भगवान बताते हैं कि यद्यपि वे संसार की इस व्यवस्था के मूल कर्ता हैं, फिर भी वे सामान्य जीवों की तरह कर्मफल के बंधन में नहीं आते। वे अकर्ता और अविनाशी हैं।

इस श्लोक का मुख्य संदेश यह है कि मनुष्य को अपने कर्तव्य को निष्ठा से करना चाहिए, लेकिन कर्म के पीछे स्वार्थ, अहंकार और फल की अत्यधिक आसक्ति को धीरे-धीरे छोड़कर ज्ञान, धर्म और भगवान के प्रति समर्पण की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।



RELATED ARTICLE



[Chapter-4 Shalok-11](#)



[Chapter-4 Shalok-12](#)



THANKS FOR READING



READ MORE RELIGIOUS
CONTENT ON



vedicprayers.com

